

विक्रम संवत्-२०३६, श्रावण सुद्ध-६, शनिवार, ता. १६-८-१९८०  
पयनामृत-१७१, १७४, १८३, १८५ प्रपयन नं. ९

अेक म्यानमें ढो तलवारें नहीं समा सकती. चैतन्यकी महिमा और संसारकी महिमा ढो अेकसाथ नहीं रह सकती. कुछ ञुव मात्र क्षणिक वैराग्य करते हैं कि संसार अशरण है, अनित्य है, उन्हे चैतन्यकी समीपता नहीं होती. परंतु चैतन्यकी महिमापूर्वक जिसे विभावोंकी महिमा छूट जाय, चैतन्यकी कोर्ष अपूर्वता लगनेसे संसारकी महिमा छूट जाय, वह चैतन्यके समीप जाता है. चैतन्य तो कोर्ष अपूर्व वस्तु है; उसकी पहिचान करनी चाहिये, महिमा करनी चाहिये. १७१.

किसीकी चिठी है, ८१, ८२ पढना. १७१. 'अेक म्यानमें ढो तलवारें नहीं समा सकती.' क्या कहते हैं? अेक म्यानमें ढो तलवारें नहीं समा सकती. वैसे 'चैतन्यकी महिमा...' वस्तु यह है. अंदर भगवान आनंद अतीन्द्रिय आनंद, पूर्ण शांतिका सागर, उसके स्पर्शसे अनंत अनंत शांति ढो अैसा प्रभु. 'चैतन्यकी महिमा और संसारकी महिमा ढो अेकसाथ नहीं रह सकती.' अंतर आनंदस्वरूप प्रभु उसकी महिमा और रागादि विकल्पकी महिमा अेकसाथ नहीं रह सकती. जिसको रागकी महिमा है, उसको चैतन्यकी महिमा नहीं है. जिसको रागका कर्तृत्व है, उसको चैतन्यकी महिमा नहीं है. आलाला...! भेदज्ञान है. 'चैतन्यकी महिमा और संसारकी महिमा ढो अेकसाथ नहीं रह सकती.' अंतरमें अतीन्द्रिय आनंद और अतीन्द्रिय शांत, शांत चारित्र यानी शांत अकषाय स्वभावसे भरा शांत (स्वभाव). करना-बरना कुछ नहीं, अंदर जम जाना. अैसा जे चारित्र है उसकी महिमा है. वह महिमा और संसारकी महिमा अेकसाथ नहीं रह सकती.

'कुछ ञुव मात्र क्षणिक वैराग्य करते हैं...' कोर्ष क्षणिक वैराग्य करता है, बाहरसे. क्षणिक क्यों कहा? त्रिकाव ज्ञायके अनुभव बिना पुण्य और पापका वैराग्य नहीं होता. पुण्य और पाप अधिकारमें भगवान अमृतचंद्राचार्य कहते हैं, जिसको पुण्य-शुभभावकी रुचि है, उसको आत्माकी रुचि है नहीं. जिसको शुभभाव कर्तृत्वकी बुद्धि है, उसको आत्माकी रुचि है नहीं. ढसलिये कहते हैं कि ढो महिमा अेकसाथ नहीं (रह सकती). 'कुछ ञुव मात्र क्षणिक वैराग्य...' बाहरसे अेक साधारण वैराग्य

धारण करके कुटुंब छोड़े, स्त्री छोड़े, कपड़े छोड़े, नञ्ज मुनि लो जाय. अनंत बार लुआ है. उसमें कोई नयी चीज नहीं है. पंच मलाप्रत धारण करे. वल कोई नयी चीज नहीं. वल तो अनादृि अज्ञानी अलवि ली करता है और अनंत बार नौवीं त्रैवेयक गया. ये अंतरकी मलिमा.. सूक्ष्म बात है, लार्छ!

विकल्पसे आलरसे लटकर अंदरमें जाना, ऐसी चैतन्यकी मलिमाके आगे संसारकी मलिमा रल सकती नहीं. शुभरागकी मलिमा ली नहीं रल सकती. चैतन्यकी मलिमाके आगे शुभ तीर्थकर गोत्र बांधनेका लाल है, उसकी ली मलिमा रलती नहीं. आलाला..! ऐसी चैतन्यकी मलिमा है. वल तो क्षणिक वैराज्य करता है. आत्मा नित्यानंद प्रलुकी मलिमा आये बिना आल्य चीजकी मलिमा छूटती नहीं.

‘संसार अशरल है, अनित्य है, उन्हें चैतन्यकी समीपता नहीं लोती.’ अज्ञानी अनादृिसे ऐसा मानता है कि संसार अशरल है, अनित्य है. परंतु सामने शरल और नित्य चीज देणी नहीं. नित्यानंद प्रलु आनंदका धन है, उसके सामने देआ नहीं. आलाला..! बात तो अलुत सादृी है. काम अलुत अडा है. अनंत कालमें जैन संप्रदायमें अनंत बार आया, अनंत बार कियाकांड ली की. ऐसी किया कि यमकी निकावकर नमक छीडके तो ली क्रोध न करे. वल कोई किया नहीं है. अंतर चैतन्य आनंदकी मलिमा आये बिना दूसरकी मलिमा छूटेगी नहीं. आलाला..! यल बात करते हैं.

‘संसार अशरल है, अनित्य है...’ ऐसा अज्ञानी मानता है. लेकिन नित्य और शरलके सामने देअता नहीं. ‘उन्हें चैतन्यकी समीपता नहीं लोती.’ संसार अशरल, अनित्य है (ऐसा वैराज्य करता है), लेकिन अंदर चैतन्यके सामने देअता नहीं. अंदर लगवान अतीन्द्रिय आनंद, पूर्ण शांति, उपशमरस वरसे रे प्रलु तारा नयनमां, ऐसा प्रलुको कलता है, लेकिन अपनेमें है. ऐसा कलते हैं. उपशमरस वरसे रे प्रलु तारा चैतन्यमां. चैतन्यमें उपशमरस (अरसता है). आलाला..!

मुमुक्षु :- शांतिका रस चैतनमें लरा है.

उत्तर :- पूर्ण लरा है. लबालल. अड़पी है, क्षेत्र थोडा है, ईसलिये उसको मलिमा आती नहीं. अड़पी है, क्षेत्र छोटा है, शरीर प्रमाण और अनादृिका अब्यास या तो अशुलका है, अथवा तो उसे छोडकर शुलका है. शुलका अब्यास ली अनादृिसे है. आलाला..! उसके आगे चैतन्यकी शांति, शांति, शांति, शांति... शांति पर नजर जाती नहीं. चैतन्यकी समीपता नहीं लोती. रागके रसके प्रेममें.. स्थूल रागकी बात नहीं है. सूक्ष्म राग. सूक्ष्म रागमें, अरे..! गुण-गुणीका लेदृप विकल्प है, उसके

भी प्रेम रुक गया, उसको चैतन्यकी समीपता नहीं होती।

जिसको 'चैतन्यकी महिमापूर्वक...' आला..! 'जिसे विभावोंकी महिमा छूट जाय,...' अतीन्द्रिय आनंद और शांति, उसका एक अंश भी सम्यग्दर्शन होने पर उसका एक नमूना, नमूना कहते हैं? सम्यग्दर्शनमें शांतिरसका गंज है. अतीन्द्रिय आनंदका पिंड है, तो सम्यग्दर्शनमें उसका नमूना आता है. उस नमूनाके द्वारा पूरे तत्त्वकी प्रतीति करता है कि पूरा आत्मा अतीन्द्रिय आनंद और अतीन्द्रिय शांतिसे भरा है. आलाहा..! जिसने नमूना (देखा नहीं), उसे पूरी यीजकी प्रतीति कहांसे हो? समझमें आया? आलाहा..! जिसके पास चैतन्यके समीप जाकर अंदरमें एक क्षण भी बसना, उस शांतिके आगे दुनियाका वैराग्य है नहीं.

दुनियाका वैराग्य तो भगवान उसे कहते हैं कि शुभरागसे भी विरक्त हो. पुण्य अधिकारमें आता है, समयसार. शुभ और अशुभराग दोनोंसे विरक्त हो. उसको वैराग्य कहते हैं. आलाहा..! शुभ-अशुभसे विरक्त हो तब वैराग्य होता है, तब चैतन्यके समीप जाता है. तब चैतन्यके समीप भी आया और परसे वैराग्य हुआ, दोनों अकेसाथ हुआ. आलाहा..! कठिन बात है, भाई! बाकी सब आसान है.

'चैतन्यकी कोई अपूर्वता लगनेसे...' चैतन्यकी कोई अपूर्वता, अपूर्वता-पूर्वमें कभी शांति और आनंद अतीन्द्रियकी गंध आयी नहीं, उसका नमूना ज्ञाननेसे अपूर्वता लगनेसे. ये कोई अपूर्व भगवान है. आत्मा अतीन्द्रिय आनंदके अंशके आगे, अतीन्द्रिय शांतिके एक अंशके आगे पूरी यीज भगवान पूर्ण है, ऐसी अंदर अनुभव, प्रतीति होती है. आलाहा..! 'चैतन्यकी कोई अपूर्वता लगनेसे..' कोई अपूर्वता यानी आनंद. आलाहा..! अतीन्द्रिय आनंदका स्वाद वह वैराग्य. क्योंकि उस स्वादके आगे दुनियाका कोई भी स्वाद, ईन्द्रका ईन्द्रासन भी सड़े लुअे तिनके जैसा लगता है. उसके बिना बाहरसे सम्यग्दर्शन बिना वैराग्य आता है वह कृत्रिम होता है. जैसा कृत्रिम वैराग्य तो अनंत बार किया.

यहां कहते हैं, 'चैतन्यकी कोई अपूर्वता लगनेसे संसारकी महिमा छूट जाय...' आलाहा..! चैतन्यका एक भी अंश.. यह प्रभु तो पूरा अंशी है. सम्यग्दर्शनमें और सम्यग्ज्ञानमें उसका अंश आता है. अंशीका अंश आता है. उस अंशके आगे जगतकी (महिमा नहीं आती). 'चैतन्य तो कोई अपूर्व वस्तु है; उसकी पहिचान करनी चाहिये, महिमा करनी चाहिये.' आलाहा..! यह बात है. १७३ पूरा हुआ न?

**‘मैं हूँ चैतन्य’.** जिसे घर नहीं मिला है जैसे मनुष्यको बाहर भडे-भडे बाहरकी वस्तुओं, धमाल देजने पर अशांति रहती है; परंतु जिसे घर मिल गया है उसे घरमें रहते हुए बाहरकी वस्तुओं, धमाल देजने पर शांति रहती है; उसी प्रकार जिसे चैतन्यघर मिल गया है, दृष्टि प्राप्त हो गई है, उसे उपयोग बाहर जय तज भी शांति रहती है. १७४.

१७४. क्या कहते हैं? आलाहा..! ‘मैं हूँ चैतन्य’.

जिसे घर नहीं मिला है...’ दृष्टांत है. जिसको घर नहीं मिला हो ‘जैसे मनुष्यको बाहर भडे-भडे बाहरकी वस्तुओं, धमाल देजने पर अशांति रहती है;...’ क्या कहा? जिसको घरका घर है और घरके बाहर भडा है. उसका घर तो है नहीं. उसमें जगतकी धमाल देजकर, मेरे पर भी जैसी धमाल आ जायेगी, जैसी अशांति उसको उत्पन्न होती है. ‘बाहरकी वस्तुओं, धमाल देजने पर अशांति रहती है; परंतु जिसे घर मिल गया है...’ चैतन्यघर जिसको अंदरसे मिल गया, ‘उसे घरमें रहते हुए...’ अतीन्द्रिय आनंदमें रहते हुए ‘बाहरकी वस्तुओं, धमाल देजने पर भी...’ बाहर लडाईं देजे, किसीका संसार देजे, अपने अंदर भी कोई लडाईंका भाव आ जाय. कोडो मनुष्यके बीच भडा हो और लार्जों लोर्गोंकी लिसा भी हो जाय. आलाहा..! लेकिन घरमें भडा है, अंतरमें घरमें भडा है और बाहरकी धमाल देजता है. आलाहा..! मात्र बाहरमें देजता है उसको धमालकी अशांति दृष्टती है. अंदरमें रहनेवालेको बाहरकी धमाल दृष्टती नहीं. उसकी शांति चलायमान होती नहीं. चाले जे भी धमाल हो. थोडी सूक्ष्म बात है. बहिनने तो अंदरकी बात बाहर थोडी-थोडी रफी है. आलाहा..!

‘परंतु जिसे घर मिल गया है उसे घरमें रहते हुए बाहरकी वस्तुओं धमाल देजने पर शांति रहती है;...’ अपने मकानमें रहा है, बाहरकी धमाल देजे, दूसरेका घर जलता हुआ देजे तो भी अशांति नहीं होती. आलाहा..! जिसे अंदरमें घर मिल गया, प्रभु चैतन्य रागसे रहित, विकल्पसे रहित, निर्विकल्प आनंद, निर्विकल्प आनंदका धाम, स्वयं ज्योति सुजधाम, स्वयं ज्योति चैतन्य सलज और सुजका स्थान, सुजका क्षेत्र, उसको देजकर ‘बाहरकी वस्तुओं धमाल देजने पर शांति रहती है;...’ आलाहा..! भाषा सादी है. भाषामें मानों कोई... वस्तुस्थिति यह है.

चैतन्यकी महिमा आये बिना कोई भी परचीजमेंसे उसकी रुचि लटती नहीं. क्योंकि रुचि अनुयायी वीर्य. जिसमें रुचि है उसमें वीर्यका इवाव होता है. आलाहा..!

धुमकिरके बात यह है कि चैतन्यके घरमें आ जा, भगवान! तेरा घर यह है. राग, पुण्य, दया, दानका विकल्प तेरा घर नहीं. आलाला..! 'उसी प्रकार जिसे चैतन्यघर भिन्न गया है, दृष्टि प्राप्त हो गई है,...' आलाला...! अपना अनुभव आनंदका हो गया है, उसका नाम चौथा गुणस्थान है. अतीन्द्रिय आनंदका अनुभव, उसका नाम चौथा गुणस्थान समकित है. श्रद्धामात्र करना वह समकित नहीं. आलाला..! 'उसी प्रकार...' धमाव द्विजने पर भी शांति रहती है, 'उसी प्रकार जिसे चैतन्यघर भिन्न गया है, दृष्टि प्राप्त हो गई है, उसे उपयोग बाहर जाय...' उपयोग बाहरमें (जाय और) विकल्प आये, 'तब भी शांति रहती है.' ध्रुवको पकडा है. आलाला..! 'ध्रुव धरणी माथे कियो रे, कुण्ड गंजे नर भेट' जिसने ध्रुव जैसा आत्मा भगवान, ध्रुव तो पर्यायको भी कहते हैं. समयसारकी पहली गाथा. ध्रुव, अथर्व, अनुपम. वह ध्रुव तो मोक्षकी पर्यायको कहते हैं. पहली गाथा है न? वह ध्रुव नहीं. वह तो ध्रुव क्यों कहा? मोक्षमेंसे वापस आता नहीं, साद्विअनंत अेकड़प रहता है, ईश्वरिये उसे ध्रुव कहा, पहली गाथामें. पहला शब्द वह है समयसारका.

वंदितु सव्वसिद्धे ध्रुवमचलमणोवमं गदिं पत्ते।

वोच्छामि समयपाहुडमिणमो सुदकेवलीभणिदं।।१।।

क्या कहा? दूसरी गाथामें वह कहा. मैं समयसार कहूंगा, तो समयसारका माव क्या? आलाला..! कहा कि, 'जीवो चरित्तदंसणणाणठिदो'. चंद्रभाई! समयसारकी दूसरी गाथा. मैं समयसार कहूंगा, लेकिन समयसार अर्थात् क्या? आला..! 'जीवो चरित्तदंसणणाणठिदो' जो आत्मा अपनी शांति, आनंद, श्रद्धा, ज्ञान, समकितमें जो स्थिर होता है. 'जीवो चरित्तदंसणणाणठिदो तं हि ससमयं जाण' उसे तू स्वसमय ज्ञान. आलाला..! दूसरी गाथा. और जो 'पोगलकम्मपदेसद्धिदं' जो रागके कणमें रहता है वह पुद्गलमें रहा है. आलाला..! पुण्यके परिणाममें जो रहता है, वह पुद्गलमें रहता है. दूसरा पद आया न? 'जीवो चरित्तदंसणणाणठिदो तं हि ससमयं जाण। पोगलकम्मपदेसद्धिदं' पुद्गलके प्रदेशमें परसमय रहा है. परमाणुमें रहा है? आलाला..! वह पुद्गलका ही प्रदेश है. दया, दान, व्रत, भक्ति, पूजा आदिका शुभभाव सब पुद्गलका ही प्रदेश है, पुद्गलका ही भाग है. आलाला..! यह दूसरी गाथा. दूसरी गाथाका सार.

'जीवो चरित्तदंसणणाणठिदो तं हि ससमयं जाण' उसे तू स्वसमय आत्मा ज्ञान. आत्मा अपना स्वभाव दर्शन, ज्ञान, शांतिमें रहता है, स्थिर होता है, जमता है, अनुभव करता है उसको स्वसमय ज्ञान, उसको आत्मा ज्ञान. स्वसमय अर्थात्

उसको आत्मा ज्ञान. और उसके सिवा रागादि विकल्पमें है वह आत्मा नहीं. वह तो पुद्गलके प्रदेशमें स्थित है. आलाला..! गजब है! रागादि कणमें रहनेवाला, शुभ क्रियाकांडमें रहनेवाला पुद्गलमें रहा है. पुद्गलका प्रदेश है, भगवान आत्माका वह प्रदेश-क्षेत्र या भाव नहीं है.

यहां वह कला, १७४ आया है न? 'जिसे चैतन्यघर भिन्न गया है, दृष्टि प्राप्त हो गई है, उसे उपयोग बाहर जाय...' यौथे, पांचवे गुणस्थानमें तो रौद्रध्यान भी होता है. फिर भी दृष्टि ध्रुव पर पड़ी है, समकित (जाता) नहीं. रौद्रध्यान होता है. आलाला..! छठे गुणस्थानमें रौद्रध्यान नहीं है, यहां सिर्फ आर्तध्यान है. आलाला..! आर्तध्यान है फिर भी छठा गुणस्थान है. यहां रौद्रध्यान है फिर भी यौथा और पांचवा गुणस्थान है. वह दशा पलट गई है, अंदरमें भिन्न हो गया है. आला..! अकमें आनंदकंडका ध्यान है, अकमें रागका (ध्यान है). दोनों भिन्न हो गये हैं, जुटा हो गये हैं. वह कला.

'उसे उपयोग बाहर जाय...' धर्मिका उपयोग रागमें, विकल्पमें, विषयमें, वासनामें, भोगमें, लडाईमें भी जाय, फिर भी 'शांति रहती है.' अंतरमें आनंदका ध्रुवका ध्यान है. ध्रुवका ध्येय, ध्रुवका ध्येयका ध्यान, ध्रुवका ध्येयका ध्यान उटता नहीं. भसता नहीं को क्या कहते हैं? उटता नहीं. आलाला..! ऐसी बात है. १७४ हुआ न? अब, १८३.

**चैतन्यदेव रमणीय है, उसे पहचान. बाहर रमणीयता नहीं है. शाश्वत आत्मा रमणीय है, उसे ग्रहण कर. क्रियाकांडके आडंबर, विविध विकल्परूप कोलाहल, उस परसे दृष्टि हटा ले; आत्मा आडंबर रहित, निर्विकल्प है, यहां दृष्टि लगा; चैतन्यरमणता रहित विकल्पोंके कोलाहलमें तुझे थकान लगेगी, विश्राम नहीं मिलेगा; तेरा विश्रामगृह आत्मा है; उसमें जा तो तुझे थकान नहीं लगेगी, शांति प्राप्त होगी. १८३.**

१८३. 'चैतन्यदेव...' आलाला..! 'चैतन्यदेव रमणीय है,...' उसको चैतन्यदेव कला. दिव्य शक्तिका भंडार, दिव्य शक्तिका सागर, उसको देव कला. कलशमें भी आता है. अमृतचंद्राचार्य. समयसारका कलश आता है न? कलशमें भी आता है कि देव है, आत्मा देव है. आलाला..! जिसकी दिव्यताके आगे ईन्द्रके ईन्द्रासन भी सडे लुअे बिझीके मुट्टे जैसा लगता है. आलाला..! आत्माके आनंदके आगे, भले यौथे गुणस्थानमें हो, लेकिन आत्माके आनंदके आगे ईन्द्रका ईन्द्रासन भी सडा हुआ

कृता अथवा सड़ी लुई बिछी जैसा लगता है. रस उड गया. रस आत्मामें लग गया, ँसलिये यहांसे रस छूट गया. जिसको परमें रस लगा है, उसको स्वरस है नहीं. आलाला..! कौन-सा आया है? १८३.

‘चैतन्यदेव रमणीय है, उसे पहिचान.’ भगवान अंदर रमणीय है. आलाला..! कोई अवलौकिक रमणता उसमें भरी है. चमडेके अंदर भिन्न है जैसा देभकर, अल्प है जैसा न मान. चमडी और लडीके अंदर दिभता है, ँसलिये उसे अल्प मत मान. ‘चैतन्यदेव रमणीय है, उसे पहिचान. बाहर रमणीयता नहीं है.’ आलाला..! सर्वार्थसिद्धका वैभव या चक्रवर्तीका वैभव, उसमें रमणीयता नहीं है. यह तो धरकी बात है. जिसे अंदरकी रमणीयता भासित लुई, उसे पूरी दुनियाकी रमणीयता छूट गई. आलाला..!

‘शान्त आत्मा रमणीय है,...’ भगवान नित्यानंद, वही रमणीय है. आलाला..! रमने योग्य रमणीक और शोभनीक हो तो भगवान नित्य आत्मा है. आलाला..! ‘शान्त आत्मा रमणीय है, उसे ग्रहण कर.’ ग्रहण कर अर्थात् उसका अनुभव कर. उसके बिना सब व्यर्थ है. आलाला..! भगवान आत्मा अतीन्द्रिय आनंद, उसे ग्रहण कर, पकड. तेरी पकड अनादिसे रागमें हो गयी है, वह पकड छोड दे. अंदर भगवान आत्मा रमणीय है, उसे पकड ले. भाषा तो सादी है, भाव बहुत कठिन है, भाई!

‘क्रियाकांडके आंडबर,...’ आलाला..! बाह्य क्रियाकांडके आंडबरमें अपनेको रोक लिया. आलाला..! ‘विविध विकल्परूप कोवालव,...’ यह छोडा, यह लिया, यह क्रिया, वह सब विकल्पकी जाल है, रागकी जाल है. रागकी जाल, कोवालव ‘उस परसे दृष्टि लटा बे;...’ पर ओरका कोवालव जो विकल्प है, उससे लट जा. भाषा तो क्या आये? लटा बे, भाषासे काम (होता है)? आलाला..! दृष्टि पलट जाती है. जो दृष्टि राग पर है, जो दृष्टि पर्याय पर है, वह दृष्टि द्रव्य पर पलट दे. क्योंकि पर्याय पलटती तो है, पलटनेका उसका स्वभाव तो है ही, लेकिन स्व ध्येय पर कभी पलटी नहीं. आलाला..! रागके लक्ष्यसे, द्वेषके लक्ष्यसे पलटकर अनादिसे पर्यायमें रहा. चाहे तो दया, दान, व्रत (करके) नौवीं त्रैवेयक मुनि गया. व्रत, पर्याय निरतिचार पावे, हां! फिर भी मिथ्यादृष्टि है. आत्माके आनंदका रस आये बिना ‘क्रियाकांडके आंडबर विविध विकल्परूप कोवालव, उस परसे दृष्टि लटा बे;...’ आलाला..! यह तो तत्त्वकी बात है.

‘आत्मा आंडबर रहित,...’ है. भगवान आत्मा निर्विकल्प आनंद (स्वरूप)

है. जिसमें विकल्प मात्र नहीं है. निर्विकल्प अजंड तत्त्व है अंदर. विकल्प उठना उसके स्वभावमें है ही नहीं. आलाला..! विकल्पसे हटकर, 'आत्मा आडंबर रहित, निर्विकल्प है.' आलाला..! 'वहां दृष्टि लगा;...' दे, प्रभु! आलाला..!

स्वसमय उसीको कला. फिर तो विस्तार किया. दूसरी गाथामें कला कि 'जीवो', 'जीवो'. इसलिये ४७ शक्तिमें पहली जवत्व शक्ति ली है. ४७ शक्ति है न? पहली जवत्व ली है. वह इसमेंसे लिया है. 'जीवो'मेंसे लिया है. दूसरी गाथाका पहला शब्द. जवत्वशक्तिसे विराजमान जव है. जवत्वशक्तिमें अनंत आनंद, अनंत ज्ञान, अनंत दर्शन, अनंत वीर्य.. आलाला..! वह उसका जवन है. उस जवनको धरनेवाला वह जव है. आलाला..! जवत्वशक्ति है न? ४७में पहली शक्ति. वह यहांसे निकाली है. 'जीवो चरित्तदंसणणाणठिदो' पहला चरित्र शब्द लिया है. मुनि है न? मुनिने बनाया है न. अपना शुद्ध चैतन्य निर्विकल्प स्वरूप, अजंडानंद विकल्पका संग जिसको है नहीं, आलाला..! ऐसा करुं और ऐसा न करुं, ऐसा छोडुं और ऐसा न छोडुं, वह सब विकल्पकी जाल है. रागकी जाल है. रागकी जालमें 'तुजे थकान लगेगी, विश्राम नहीं मिलेगा;...' वहां विश्राम-शांति नहीं मिलेगी. आलाला..!

'तेरा विश्रामगृह आत्मा है;...' तेरा विश्रामगृह यौरासीकी थकान दूर करनेका विश्रामगृह आत्मा है. जहां यौरासीके अवतार छूट जाते हैं. सर्वार्थसिद्धके देवका भी अवतार छूट जाता है. वह तेरा विश्रामगृह है. आलाला..! जबतक विश्राम नहीं मिलेगा, 'तेरा विश्रामगृह आत्मा है,...' उसमें आ जा. 'उसमें जा, तुजे थकान नहीं लगेगी,...' रागकी जालमें तुजे थकान लगेगी, उलझनमें आ जायगा, दुःख लगेगा, आकूलताकी जालमें रुक जायेगा. जैसे मकड़ी.. आलाला..! अपनी लार निकावकर उसीमें रुकता है. मकड़ी अपने मुँहमेंसे लार निकावकर वहीं अटकती है. आलाला..! वैसे अज्ञानभावमें विकारकी लार निकावकर उसमें तू घुस गया है. आलाला..! करोणियो कलते हैं न? हमारेमें करोणियो कलते हैं.

अक बाल वहां कला था. मनुष्य हुआ. मनुष्य है उसके दो पैर है. स्त्री लुई तो चार पैर लुं. पशु हुआ, पशु. दूसरी भाषा है न. दुर्घटना शब्द लिखा है न? दुर्घटना. स्त्रीके साथ शादी करना दुर्घटना है. त्रिलोकनाथ मलावीर परमात्मा ब्रह्मचारी रहे. क्योंकि स्त्री दुर्घटना है. उसके बाद सब दुर्घटना ही होगी. आलाला..! यहां कलते हैं, विश्रामगृह अक (आत्मा) है. 'उसमें जा तो तुजे थकान नहीं लगेगी,...' आलाला..! शांति प्राप्त होगी. शांतिका सागर है. शांति अर्थात् शास्त्र भाषासे अकषाय भाव है. अकषाय भावसे पूर्ण भरा है. पूर्ण शांति.. शांति.. शांति.. जिसके शांतिके



अंशके आगे... आलाला..! सर्वार्थसिद्धका देव भी गिनतीमें नहीं आता. वह भी समझिती अंशवतारी है. यहां जो शांतिका अंश आया, उसमें चौथेसे पांचवे गुणस्थानमें जाय.. आलाला..! सर्वार्थसिद्धमें जो शांति है, उससे भी विशेष अधिक शांति है. पंचम गुणस्थान पडिमाधारी, बाह्यमें पडिमा है वह तो विकल्प है, परंतु अंदर आनंद है, वह वस्तु है. आनंद आदि हो तो विकल्पको व्यवहार कलनेमें आता है. नहीं तो व्यवहार भी नहीं है. आलाला..!

आनंदके घरमें वह रहता है. आला..! उसमें तुझे शांति लगेगी. तेरा घर शांतिका सागर है. कैसे बैठे? भाई! वह कोई विकल्पसे बैठे या सुनकर बैठे, वह कोई चीज नहीं है. सुनकर बैठे या धारणामें आया वह कोई चीज नहीं है. अपनी चीज आनंदकंड नाथ, उसका स्पर्श करनेसे जो शांति मिलेगी, ऐसी शांति तीन लोकमें किसी स्थानमें नहीं है. आलाला..! उसमें पंचम गुणस्थानवालेको सर्वार्थसिद्धकी शांति है उससे विशेष शांति मिलेगी. सर्वार्थसिद्धका देव अंशवतारी, अंक भवमें मोक्ष जानेवाला है. उसकी जो चौथे गुणस्थानकी (शांति) है, (उससे) पंचम गुणस्थानका आनंद अनुभवमें आया है, तो उसका आनंद तो उससे भी बढ गया. सर्वार्थसिद्धके देवसे आनंद बढ गया. आलाला..! तब उसे पडिमाधारी कलनेमें आता है. आलाला..! इसलिये यहां विश्राम लिया.

‘शांति प्राप्त होगी.’ शांति अंदरमें है. १८३ (पूरा हुआ).

मुमुक्षु :- आपने तो करणानुयोगका व्याख्या भी कर दिया.

उत्तर :- वह तो नाम दिया. १८३ हुआ न? अब, १८५.

**मुनिराज कहते हैं :- चैतन्यपदार्थ पूर्णतासे भरा है. उसके अंदर ज्ञाना और आत्मसंपदाकी प्राप्ति करना वही हमारा विषय है. चैतन्यमें स्थिर होकर अपूर्णताकी प्राप्ति नहीं की, अपूर्णनीय समाधि प्राप्त नहीं की, तो हमारा जो विषय है वह हमने प्रगट नहीं किया. बाहरमें उपयोग जाता है तब द्रव्य-गुण-पर्यायके विचारोंमें उकना होता है, किंतु वास्तवमें वह हमारा विषय नहीं है. आत्मामें नवीनताओंका भंडार है. भेदज्ञानके अभ्यास द्वारा यदि वह नवीनता-अपूर्णता प्रगट नहीं की, तो मुनिपनेमें जो करना था वह हमने नहीं किया. १८५.**

१८५. ‘मुनिराज कहते हैं :- चैतन्यपदार्थ पूर्णतासे भरा है.’ महाव्रतधारी सत्य बोलनेवाले. आलाला..! वे कहते हैं, ‘चैतन्यपदार्थ पूर्णतासे भरा है.’ शांतिसे,

आनंदसे, वीतरागतासे वीतरागतासे पूर्ण भरा है. जिसमें रागकी गंध नहीं. आलाहा..!  
 ऐसा आत्मा कैसे माने? वीतरागकी मूर्ति पूरी. पूरी दुनियामें इश्वर हो जाय, लेकिन  
 उसकी वीतरागमूर्तिमें इश्वर नहीं होता. ऐसा वीतरागमूर्ति आत्मा है. 'चैतन्यपदार्थ  
 पूर्णतासे भरा है. उसके अंदर जाना...' आलाहा..! उसके अंदर जाना. रागसे  
 हटकर.. प्रभु! शब्द तो बहुत थोड़े हैं. राग-विकल्पसे हटकर निर्विकल्प आनंदमें जाना  
 वह चीज है. करना वह है. कल कल था न? बारह अंग विकल्प है. बारह अंग  
 है विकल्प, उसमें अनुभूति कलनेमें आयी है. आत्माका आनंदका अनुभव कलनेमें  
 आया है. बारह अंगमें सार वह कल है. आलाहा..! भले वह है विकल्प, लेकिन  
 उसमें कल वह है. आत्माकी अनुभूति-आनंद. आनंदका अनुभव करो. प्रभु! तेरे  
 घरमें आनंद भरा है. आलाहा..!

अपने सिवा जगतकी कोई भी चीज, थोड़ी भी ठीक है, ऐसा लगे, सुभ  
 लगे, मजा लगे तबतक मिथ्यात्व है. आलाहा..! अपने आत्माके सिवा कहीं भी  
 सुभकी गंध लगे, सुभका परंपरा कारण भी लगे,.. आलाहा..! राग करेंगे तो परंपरासे  
 वीतरागता मिलेगी, वह भी... आलाहा..! दुर्गंध है. आत्माकी गंध नहीं. आलाहा..!  
 सूक्ष्म बात है, भाई!

'मुनिराज कहते हैं : चैतन्यपदार्थ पूर्णतासे भरा है.' अनंत ज्ञान, अनंत  
 दर्शन, अनंत आनंद, अनंत वीर्य, अनंत स्वच्छता, अनंत श्रवण, चित्, दृशि,  
 ज्ञान, सुभ, वीर्य, प्रभुता, विभुता, सर्वदर्शी, सर्वज्ञ, स्वच्छता ऐसी अनंत शक्तिसे  
 परिपूर्ण भरा है. आलाहा..! 'उसके अंदर जाना...' उसके अंदर जाना. आलाहा..!  
 वह सार है. क्या करना? अंदर जाना, वह करना है. वह कोई बाह्य क्रियाकांडका  
 सेवन करनेसे अंदर जायेगा, (ऐसा) त्रिकालमें नहीं है. आलाहा..! 'उसके अंदर  
 जाना और आत्मसंपदाकी प्राप्ति करना...' मुनिराज ऐसा कहते हैं कि 'आत्मसंपदाकी  
 प्राप्ति करना वही हमारा विषय है.' नियमसारमें है, कलश है. नियमसारमें कलश  
 है. हमारा विषय अतीन्द्रिय आनंदका अनुभव, वह विषय हम नहीं करते हैं, ऐसा  
 कहकर बोध दिया है. कलश है, नियमसारमें. हमारा विषय, मुनिराजका विषय अतीन्द्रिय  
 आनंद विषय है. आलाहा..!

यहां वह कहते हैं, 'चैतन्यपदार्थ पूर्णतासे भरा है. उसमें अंदर जाना और  
 आत्मसंपदाकी प्राप्ति करना वही हमारा विषय है.' मुनिराजका वह विषय है.  
 आलाहा..! सच्चे मुनि इसको कहते हैं. क्रियाकांड करे वह मुनि नहीं है. आलाहा..!  
 'आत्मसंपदाकी प्राप्ति करना वही हमारा विषय है.' क्या कल? हमारा ध्येय तो

अकेले आनंदकंदके उपर है. बाहरमें प्रवृत्ति-उपयोग थोडा आ जाता है, लेकिन उपयोग आता है उसमें दृःभ लगता है. आलाहा..! उपदेशका, विभनेका विकल्प दृःभ है. शास्त्रकी टीका विभना, वह विकल्प दृःभ है. आलाहा..! हमारा विषय वह नहीं है. है? 'आत्मसंपदाकी प्राप्ति करना वही हमारा विषय है.' आलाहा..! विभना या उपदेश देना, हमारा विषय नहीं है. आ जाओ तो आ जाओ, उसके कारणसे हो जाओ, हमारा विषय नहीं है. हम उसमें है नहीं. आलाहा..!

यहां तो 'आत्मसंपदाकी प्राप्ति करना वही हमारा विषय है.' आलाहा..! पंच मलाप्रत पालना, अष्टाईस मूलगुण पालना हमारा विषय है, ऐसा नहीं लिया. नियमसारमें यह क्लेश है. बलिनने विभा है वह उसमेंसे विभा है. पढते होंगे तो उसमेंसे यह बोले हैं. पञ्चप्रभमलधारीदेव मुनि कहते हैं, हमारा विषय यह है, यहां हम जाते नहीं. ऐसा कहकर लोगोको आगे बढ़ाते हैं. हमारा विषय तो अके ही है. चैतन्यस्वरूप आनंदकंदमें रहना, अस. आलाहा..! पंच मलाप्रत पालना या वह करना (हमारा विषय नहीं है). क्लेश है. पञ्चप्रभमलधारीदेव नियमसारकी टीका करनेवाले, उनका क्लेश है. आलाहा..! हमारा विषय जो है, हमारा जो ध्येय है यहां हम जाते नहीं और बाहरमें रहते हैं, अरे..रे..! ये विषय नहीं. ऐसा कहकर अल्प कोई विकल्प आया, उसका भेद किया है. विकल्प आया उसका भेद (किया है). विकल्प क्या? हमारी चीजमें विकल्प तीन कालमें नहीं है. हमारा विषय तो यह है. कदा न? आलाहा..! क्या?

'चैतन्यमें स्थिर होकर अपूर्वताकी प्राप्ति नहीं की, अवर्णनीय समाधि प्राप्त नहीं की,...' आलाहा..! जब तक यह नहीं किया, तब तक मुनिपना नहीं है. चैतन्यमें स्थिर होकर अपूर्वताकी प्राप्ति नहीं की, अपूर्व और अवर्णनीय समाधि-कथन कर सके नहीं ऐसी समाधि-आनंद, ऐसा प्राप्त नहीं किया 'तो हमारा जो विषय है...' आलाहा..! मुनिराज कहते हैं. हमारा विषय है. आलाहा..! पंच मलाप्रत (पालना), वस्त्र पहनना, नम्र होना, वह कोई मुनिका विषय है ही नहीं. आलाहा..! गजब बात है. 'हमारा जो विषय है वह हमने प्रगट नहीं किया.' विचार करते हैं. आलाहा..!

'बाहरमें उपयोग आता है तब द्रव्य-गुण-पर्यायके विचारोंमें रुकना होता है,...' विकल्प आता है तो द्रव्य-गुण-पर्यायमें रुकता है. बाहर तो नहीं, परंतु अपने द्रव्य-गुण-पर्याय तीन भेद उसमें रुकता है. वह भी राग है. वह गाथा है, नियमसारमें गाथा है, मूल पाठ है. द्रव्य-गुण-पर्याय अपनेमें तीनके विचार करनेमें रुकना वह

डररधीन, डरवश, अनररवशुड है. कुडर कलर? ढे आतुडरडे डुरवु, गुणु और डरुडरडु  
 ऐसर तीनकुर वररर करते हैं, वल अनररवशुड है, वल आशुडडे नलुी है. आररररररर  
 अडरकरडे है, नरडडसरडे. वरशेड आरुेगल... (शुरेतर :- डुरडररु वरुन गुरुडेव!)